अपने आन्तरिक और बाह्य परिदृश्य को पुनर्नवीन करना

गुरुमाई चिद्विलासानन्द द्वारा सिखावनियाँ

प्रश्न करना, दृढ़ता से लगे रहना, समझना. . .

"मैं यहाँ क्या कर रहा हूँ?"

"मैंने इस धरती पर जन्म क्यों लिया है?"

"मुझे जो जानने की आवश्यकता है, वह मैं कैसे जानूँगा?"

क्या, क्यों और कैसे, ये प्रश्न यदि आध्यात्मिक उन्नति की एवं सीमित 'मैं' के भाव से ऊपर उठने की वास्तविक क्षुधा से नहीं उभरते हैं तो ये तुम्हारी विक्षिप्त-सी सनक बन जाते हैं। अपने मस्तिष्क और अपनी परम आत्मा के साथ तुम्हारी संलग्नता से ही इन गूढ़ प्रश्नों के समाधान उभरने चाहिए। जब तुम इन दोनों को, साथ मिलकर काम करने में दृढ़ता से लगाए रखते हो तब तुम यह सुनिश्चित करते हो कि जो शोध तुम कर रहे हो, तुम्हारा हृदय उसका साक्षी है। तुम यह सुनिश्चित करते हो कि क्या, क्यों, कैसे, इन प्रश्नों के उत्तर देने के प्रयत्न में तुम्हारे तर्क-वितर्क अर्थात् तुम जिन बौद्धिक वाद-प्रतिवादों को प्रयोग में लाते हो, वे तुम्हारी आत्मा से उद्भूत हो रहे हैं और तुम्हें वापस तुम्हारी आत्मा तक ले जा रहे हैं।

यदि तुम भारतीय शास्त्रों पर गहरी दृष्टि डालो तो पाओगे कि वे प्रश्नोत्तरों से, तर्क-वितर्कों से, खण्डन-विखण्डनों से भरपूर हैं। 'बृहदारण्यकोपनिषद्' में राजा जनक और ऋषि याज्ञवल्क्य की कथा इसका एक अत्युत्तम उदाहरण है।

इस कथा में राजा जनक ऋषि याज्ञवल्क्य से एक प्रश्न पूछते हैं :

वह क्या है जो मानव को प्रकाश प्रदान करता है?

जब ऋषि याज्ञवल्क्य उत्तर में कहते हैं कि वह सूर्य है तो राजा जनक आगे पूछते हैं कि तब क्या होता है जब सूर्य अस्त हो जाता है। इस तरह, राजा जनक और ऋषि याज्ञवल्क्य के बीच प्रश्नोत्तरी चलती रहती

है जिसमें राजा जनक यह पूछते जाते हैं कि जब विभिन्न प्रकाशस्त्रोत अगोचर हो जाते हैं तो वह क्या है जो प्रकाश प्रदान करता है।

अन्त में, ऋषि याज्ञवल्क्य राजा जनक को निर्णायक और अकाट्य उत्तर देते हैं :

वह आत्मा है जो मानव को प्रकाश प्रदान करती है।

यद्यपि प्रश्नोत्तरी की ऐसी प्रक्रिया में संलग्न होते समय यह अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है कि व्यक्ति अपनी बुद्धि को प्रयोग में लाए, तथापि जो समझ वह प्राप्त करता है वह केवल मस्तिष्कजनित समझ नहीं है। भारत के महान सन्त-कवियों को यह अच्छी तरह ज्ञात था। उदाहरण के लिए, दक्षिण भारत में सन्त बसवण्णा और अल्लमप्रभु ने जिज्ञासुओं को आध्यात्मिक जीवन से सम्बन्धित विषयों को लेकर वाद-विवाद करने के लिए खुलकर प्रोत्साहित किया। इन वाद-विवादों का उद्देश्य था कि जिज्ञासु अपने मन-मस्तिष्क का और अपनी वाक्शक्ति का प्रयोग करें, जिससे फिर वे ध्वनियों, शब्दों, वाक्यांशों और वाक्य-विन्यास की उलझनों से ऊपर उठ सकें।

यह साकार से निराकार की ओर जाने की बात थी।

यह आकार से

आ का र ही न

की ओर बढ़ने की बात थी।

'अनुभवमण्टप' में, दिव्य अनुभव के मण्डप में, जिसे सन्त बसवण्णा ने इन सत्संगों के लिए निर्मित किया था, हृदय व बुद्धि के बीच विलक्षण, अति प्रभावशाली शास्त्रार्थ हुआ करते थे। कभी जिज्ञासु प्रश्न पूछते; कभी श्रीगुरु प्रश्न पूछते। जिज्ञासु के प्रश्न के उत्तर भी हर ओर से आते—श्रीगुरु से आते, अन्य जिज्ञासुओं से आते, यहाँ तक कि कभी किसी क्षण में अन्तर-प्रकाश की झलक से प्रेरित स्वयं प्रश्नकर्ता से भी आते। बहुधा, अन्य महान विभूतियाँ और सन्तजन इन सत्संगों में भाग लिया करते थे जिससे वे भी इस ऊर्जस्वी चर्चा का आनन्द उठा सकें और इसमें भाग ले सकें। एक ऐसे ही स्मरणीय अवसर पर सन्त बसवण्णा और अल्लमप्रभु के साथ होने वाले सत्संग में प्रवेश पाने के लिए, सन्त-कवयित्री अक्कमहादेवी ने एक प्रश्नमाला के बड़े ही मार्मिक उत्तर देकर भगवान शिव के साथ अपने ऐक्य को प्रमाणित किया—भगवान शिव जिन्हें वे भगवान 'चेन्नमल्लिकार्जुन' कहकर सम्बोधित किया करती थीं अर्थात् "वे सौन्दर्यशाली भगवान जो मल्लिकापुष्प के समान श्वेतवर्णी हैं।"

इस प्रकार, प्रश्न पूछे जाते। उत्तर दिए जाते। एक-दूसरे के साथ तर्क-वितर्कों का सिलसिला चलता रहता, वाद-विवाद ज़ोर पकड़ते जाते, चर्चाएँ और भी अधिक गहन, जटिल और गतिशील होती जातीं, तब तक, जब तक कि—

कुछ नहीं।

कुछ कहना शेष नहीं। कुछ करना शेष नहीं।

कुछ नहीं, बस . . .

प्रकाश!

और सब कुछ एक देदीप्यमान मौन में लय हो जाता, वह मौन जो अनन्तता तक गूँजता रहता।

यही वह गुंजायमान मौन है, वह अलौकिक अनुभूति जिसे पाने की तड़प पीढ़ी-दर-पीढ़ी जिज्ञासुओं में रही है। यही वह सत्य है जिसे इस ग्रह पर रहते हुए वे जानना चाहते हैं ताकि इस माया से, और इस भवसंसार से पार जाने का रास्ता तय करने में उन्हें महारत और प्रवीणता हासिल हो।

यदि यही वह अनुभव है जिसे *तुम* पाना चाहते हो तो तुम्हें वहाँ तक पहुँचने की प्रक्रिया को स्वीकार करना ही होगा। बाबा मुक्तानन्द सत्संगों में यह कहा करते थे कि कैसे सत्य को जानने के लिए हर कोई "लघु मार्ग" यानि "शॉर्टकट" चाहता है। बाबा जी कहा करते थे कि लोग सत्य को अति शीघ्र पाना चाहते हैं *और* वे यह भी चाहते हैं कि सत्य अपने आपमें "लघु" या संक्षिप्त हो जिससे वे इसे शीघ्रता से समझ सकें। परन्तु जैसे बाबा जी समझाया करते थे : "सत्य तो वही सत्य रहेगा, इसलिए तुम्हें इसे वैसे ही समझना होगा जैसा यह है।"

इस उपमा पर विचार करो : यदि तुम अपने स्थूल शरीर को स्वस्थ एवं दुरुस्त बनाए रखना चाहते हो तो तुम्हें नियमित व्यायाम करना होगा। अपनी मांसपेशियों के गठन के लिए एवं उन्हें बलिष्ठ बनाने के लिए तुम्हें परिश्रमी होना होगा। अपनी कंकालीय संरचना यानि हड्डियों के ढाँचे पर और तुम्हारा बाक़ी शरीर जिस भी स्थिति में हो, उस पर निर्भर रहना पर्याप्त नहीं है।

इसी तरह, यदि तुम आध्यात्मिक ज्ञान पाने की खोज में हो और उसे स्थायी रूप से बटोरकर रखना चाहते हो तो ध्यान भटकाने से काम नहीं चलेगा—यह सोचने से काम नहीं चलेगा कि चूँकि तुम किसी तीर्थस्थान पर हो आए हो या तुमने किसी पवित्र ग्रन्थ की कुछ पंक्तियाँ पढ़ ली हैं, बस इस कारण तुम्हारे लिए सब कुछ सुलझा-सुलझाया हुआ है। तुम यह अपेक्षा नहीं कर सकते कि अन्य कोई व्यक्ति

या कोई वस्तु तुम्हारा काम करेगी, कि तुम एक उँगली तक उठाए बिना अपने लक्ष्य को प्राप्त कर लोगे। नहीं, तुम्हारा प्रयत्न आवश्यक है। तुम्हें अपनी संज्ञानात्मक क्षमताओं को उपयोग में लाना ही होगा; आशीर्वादस्वरूप प्राप्त, इस विलक्षण मन-मस्तिष्क का तुम्हें लाभ उठाना ही होगा।

और जब तुम ऐसा करते हो तब तुम जो खोज निकालते हो, वह तुम्हारी उच्चतम कल्पनाओं से कहीं अधिक उत्कृष्ट होता है। तुम्हारे निर्भीक प्रयत्न और विस्मयकारी कृपा, इन दोनों का साथ सचमुच एक अति प्रभावशाली बल है। इस बल की ताक़त से तुम्हें व्यावहारिक ज्ञान, व्यावहारिक कौशल प्राप्त होगा; तुम अपने प्रश्नों के उत्तर पाने के मार्ग का एक मानचित्र तैयार कर पाओगे।

अतः प्रश्न करो, दृढ़ता से लगे रहो और फिर : *समझो*। अपने मननस्वरूप लिखते रहो—अपनी नोटबुक में या अपने मन में। जब तक तुम समाधान-स्थल पर न पहुँच जाओ, और अपनी इच्छानुसार अन्तर में विश्राम पाने की क्षमता को प्राप्त न कर लो तब तक इस प्रक्रिया में लगे रहने के लिए अपने साधना-सर्कल में विचार-विमर्श करते रहो।

मैंने सत्संगों में एक महिला यात्री की कहानी सुनाई है जिसे मिट्टी का एक अजीबोग़रीब ढेला मिलता है और वह उसे अपने घर ले जाती है। शीघ्र ही उसका पूरा घर मदमत्त कर देने वाली सुगन्ध से भर जाता है। जब उसे यह समझ में आता है कि वह सुगन्ध मिट्टी से आ रही है तो वह मिट्टी से इस बारे में पूछती है। मिट्टी उसे बताती है कि उसमें से इस तरह की सुगन्ध इसलिए आ रही है क्योंकि गुलाब उसके संगी-साथी थे।

अपने सह-जिज्ञासुओं के साथ विचारों का लेन-देन ऐसा ही है। कई बार तुम यह देख या स्वीकार नहीं कर पाते कि तुम अपनी साधना में कितना आगे बढ़ गए हो, तुमने कितना कुछ प्राप्त कर लिया है। लेकिन जब तुम अन्य समस्वभाव वाले विद्यार्थियों के सान्निध्य में होते हो तो वे तुम्हारी तपस्या के फल की ओर तुम्हारा ध्यान आकृष्ट कर सकते हैं। वे जो कह रहे हैं यदि वह एकदम सटीक है तो तुम उसे महसूस करोगे—कभी यह एहसास सूक्ष्म होता है और कभी यह तुम्हारे अन्दर शक्ति के बड़े विस्फोट के रूप में होता है। जब यह ज्ञान अन्तर में अधिकाधिक विकसित होता जाता है—यह ज्ञान कि तुम्हारे पास वह है जिसकी तुम्हें ज़रूरत है, कि तुम वास्तव में *वहाँ तक* पहुँच गए हो—तब तुम्हारी साधना स्वचालित हो जाती है। अपनी यात्रा में प्रगति करते हुए तुम मार्ग से भटक न जाओ, इसमें जिज्ञासुओं का संघम् भी तुम्हारी मदद कर सकता है; वह तुम्हें दिखा सकता है कि तुम कहाँ जा रहे हो और मार्ग पर अग्रसर होते रहने के लिए तुम्हें कहाँ *होना चाहिए*।

इस सिखावनी के आरम्भ में मैंने वे तीन प्रश्न उठाए थे जो शायद तुम स्वयं से पूछ रहे हो। आख़िरी प्रश्न था : *"मुझे जो जानने की आवश्यकता है, वह मैं कैसे जानूँगा?"* अपनी साधना के दौरान तुम्हें अलग-अलग समय पर इस प्रश्न के अलग-अलग उत्तर मिलेंगे और तुम यह पाओगे कि वे उत्तर बिलकुल सही हैं।

अभी स्वयं को केन्द्रित करने के लिए तुम मन ही मन या ज़ोर-से, अपने आपसे यह कह सकते हो :

> "मैं अपने प्रश्नों के स्पष्ट उत्तर पाऊँ और जिस ओर मैं बढ़ रहा हूँ, उसके लिए निश्चित दिशा पाऊँ।
>
> "दूसरे लोग मुझसे जो कहते हैं एवं मेरे बारे में मुझे जो स्मरण कराते हैं, उसे मैं तत्परता से व ग्रहणशीलता के साथ सुनूँ, उसका सम्मान करूँ और उसका यथोचित प्रत्युत्तर दूँ।
>
> "मैं कभी नकारूँ नहीं, उस अच्छाई को जिसकी वर्षा दूसरे मुझ पर करते हैं, उस कृपा को जो इतनी सदयता से मेरी सत्ता में बहती है, तब भी जब मैं इसकी महत्ता से बेख़बर हूँ।
>
> "मेरे जीवन में विद्यमान दिव्य हस्त की पूर्णता में मेरा मन आश्रय ले।
>
> "मैं यह जानूँ कि मेरा यहाँ होना, वह महानतम साहसिक कारनामा है जो पहले कभी नहीं हुआ।"

~ गुरुमाई चिद्विलासानन्द

© २०२४ एस. वाय. डी. ए. फ़ाउन्डेशन®। सर्वाधिकार सुरक्षित।

इस सिखावनी में सन्दर्भित कहानियों को पढ़ने के लिए, अंग्रेज़ी की सिखावनी के नीचे दिए गए लिंक पर क्लिक करें।